सुभाषिनी मिस्त्री का अस्पताल

आज हम आपको एक ऐसी महिला से मिलवा रहे हैं जिन्होंने अपने जीवन में एक सपना देखा और उसे जी जान लगाकर पूरा भी किया।

इस महिला का नाम है सुभाषिनी मिस्त्री। चौबीस परगना, पश्चिम बंगाल के एक छोटे से गांव हंसपुकुर में रहती है सुभाषिनी। उनका जन्म बंगाल के ग़रीब किसान परिवार में हुआ। 12 साल की उम्र में शादी हुई। चार बच्चे हुए— दो लड़के अजय और सुजय, दो लड़कियां, उत्तरा और बिफला।

तेतीस साल की उम्र में सुभाषिनी के पति की मौत हो गई। उसका पति खेत मज़दूर का काम करता था। एक शाम वह पेट के दर्द की तकलीफ़ लेकर घर लौटा। गांव के पास कोई इलाज की जगह नहीं थी। अस्पताल पंद्रह किलोमीटर दूर था। घर में पैसे की तंगी थी। किसी तरह उधार मांग कर सुभाषिनी अपने पति को शहर के अस्पताल ले गई। पर उसे बचा न सकी।

पति के मरने के साथ ही उसकी आमदनी के सब रास्ते बंद हो गये। उस पर चार छोटे बच्चों की ज़िम्मेदारी। पर सुभाषिनी बड़ी हिम्मत वाली थी। उसने तय किया कि वह काम करेगी। पैसे जोड़ेगी और गांव में अस्पताल बनाएगी।

शुरू-शुरू में गांव के लोग उसका मज़ाक उड़ाते थे। जिसके पास रोटी खाने के पैसे नहीं थे वह अस्पताल खोलने का सपना कैसे पूरा करेगी। पर कहते हैं न हिम्मत हो तो सब कुछ हो सकता है। ऐसा ही सुभाषिनी के साथ हुआ।

सबसे पहले उसने पास के घरों में बर्तन मांजने और साफ़-सफ़ाई का काम शुरू किया था। इस काम से वह पचास रुपये महीना कमाने लगी। पर घर के सारे खर्च करते-करते पैसा बचता नहीं था। फिर भी किसी न किसी तरह उसने दो-तीन रुपये बचाने शुरू किए।

साथ ही साथ सुभाषिनी ने खेतों में खुदाई, बीज रोपने, खर-पतवार उखाड़ने जैसे काम भी शुरू कर दिये। पर फिर भी चार-चार बच्चों की देखभाल और पढ़ाई ठीक से नहीं हो पा रही थी।

यह सब देखकर सुभाषिनी ने एक सख्त फ़ैसला लिया। उसने अपने दो बच्चों, अजय और बिफला को एक सरकारी कल्याण केंद्र भेज दिया। हालांकि वह अपने बच्चों से दूर होकर दुखी थी फिर भी उसे इस बात की तसल्ली थी कि दोनों बच्चों को अच्छी शिक्षा और भरपेट खाना मिल सकेगा। हर हफ़्ते कुछ मिठाई लेकर वह उनसे मिलने जाती और उन्हें समझाती कि यह सब उनकी एक अच्छी ज़िन्दगी के लिए ज़रूरी है। महीने में एक बार वह बच्चों को चार पांच दिनों के लिए घर ले आती थी।

खुद अपने लिए भी उसे आराम नहीं था। तीन-चार तरह के काम करती जिससे ज़्यादा पैसा कमा सके। अस्पताल खोलने का उसका इरादा दिन-ब-दिन मज़बूत होता जा रहा था।

फिर कुछ जान-पहचान वालों ने सलाह दी कि वह एक सब्ज़ी बेचने की दुकान शुरू करे। उसने बात मान ली और आसपास के खेतों से सब्ज़ी लाकर कोलकाता के पार्क सर्कस रेलवे स्टेशन के पुल के एक कोने में अपना काम शुरू किया। दुकान चल निकली। दोपहर तक उसकी सारी सब्ज़ी बिक जाती और उसे पचास रुपये का फ़ायदा होता। इस पचास रुपये में से खेत मालिकों का हिस्सा चुकाकर वह अपना पैसा जोड़ने लगी। शाम के समय वह अपना बर्तन और सफ़ाई का काम भी करती थी।

अब वह महीने भर में अस्पताल के लिए सौ-दो सौ रुपये बचा पाती थी। बच्चों के थोड़े बहुत खर्चे पूरे करने के बाद वह ज़्यादा से ज़्यादा पैसे बचाने लगी।

कुछ समय बाद उसने सारे दूसरे काम बंद कर दिए और सिर्फ़ सब्ज़ी बेचने का काम करने लगी। धीरे-धीरे अब वह पांच सौ रुपये बचाने लगी। साथ ही वह अपने बच्चों की पढ़ाई का भी पूरा ध्यान रखती। कोई और खर्चा उसके लिए मायने नहीं रखता था।

1992 तक उसने अस्सी हज़ार रुपये जोड़ लिए थे। पास ही के एक ज़मींदार से सिफ़ारिश करके उसने एक बीघा ज़मीन खरीद ली। उसने अब अपना अस्पताल बनाने का फ़ैसला साथी गांव वालों के सामने रखा और उनसे मदद मांगी। कुछ लोग उसके साथ हो लिए पर कुछ लोगों ने उसका मज़ाक उड़ाया।

गांव वालों ने थोड़ा-बहुत करके उसे 936 रुपये जोड़कर दिए। जिन लोगों के पास पैसे नहीं थे उन्होंने रेत, बांस और अपनी मेहनत देकर उसकी मदद की। 1993 के अंत तक एक छोटा सा शेड डालकर गांव में अस्पताल शुरू हो गया था।

सुभाषिनी का बेटा अजय एक होनहार छात्र था। उसने कड़ी मेहनत की और वजीफ़ा पाकर डॉक्टरी की डिग्री हासिल की। अपने कुछ साथियों के साथ मिलकर अजय मरीज़ों का इलाज करने लगा। साथ ही वह एक प्राइवेट अस्पताल में नौकरी भी करता था। उसकी बहनें व छोटा भाई भी अस्पताल में मदद करते। सबसे पहले दिन अस्पताल में 252 मरीज़ों को दवा दी गई। सुभाषिनी खुश थी परन्तु उसका सपना अभी पूरा नहीं हुआ था।

उसने दोबारा सब्ज़ी बेचना शुरू कर दिया। छोटा बेटे सुजय ने भी पढ़-लिखकर एक अच्छी नौकरी हासिल कर ली। अजय ने कुछ बड़े उद्योगपतियों और कंपनियों से मदद की गुहार लगाई। धीरे-धीरे लोगों, कंपनियों और कल्याण संस्थाओं ने अस्पताल के लिए दान देना शुरू कर दिया। 5 फ़रवरी 1995 को दो मंज़िले *मानवता अस्पताल* की नींव रखी गई और 9 मार्च 1996 को अस्पताल लोगों के लिए खोल दिया गया।

आज *मानवता अस्पताल* से 38 डॉक्टर जुड़े हैं जो दिन में तीन से चार घंटे देकर मरीज़ों का मुफ़्त इलाज करते हैं। यहां 74 नर्स और 16 सहयोगी कर्मचारी हैं जो शुरुआत में तो स्वयं सेवकों की तरह काम करते थे, पर हाल ही में उनकी सेवाओं के लिए उन्हें कुछ मुआवज़ा दिया जाने लगा है।

अस्पताल में कुछ ख़ास सुविधाएं बढ़ाने के लिए रिलायंस उद्योग ने एक बड़ा अनुदान भी दिया है। इसकी मदद से प्रसूति विभाग, दिल की बीमारी का इलाज करने की सुविधाएं, आघात सुविधाएं आदि शुरू की गई हैं।

ग़रीबों के लिए इन अस्पताल में विशेष सुविधाएं हैं। सौ बिस्तर वाले इस अस्पताल में साठ बिस्तरों पर मरीज़ों का मुफ़्त इलाज किया जाता है। बाकी चालीस मरीज़ों से हज़ार और पांच हज़ार के बीच की रकम ली जाती है जिससे पूरे सौ मरीज़ों का इलाज हो पाता है।

इस अस्पताल में अब तक करीब ढाई लाख ग़रीबों का मुफ़्त इलाज हो चुका है। अनेक पैसे वाले लोगों उद्योगों और मददगारों की सहायता से सुभाषिनी मिस्त्री का यह सपना सच हो गया है। हिम्मत, अनुशासन और पक्के इरादों वाली इस अनपढ़ और ग़रीब महिला ने हमें एक ऐसा प्रेरणादायक रास्ता दिखाया है जिसकी मिसाल शायद ही कहीं देखने को मिलती है।

सुभाषिनी मिस्त्री लगभग 75 साल की हो चुकी है पर हौसले और इच्छा शक्ति की कमी उसमें आज भी नहीं है। वह कहती है— अपने पति के मरने के बाद मैंने खुद से यह वादा किया था कि इस गांव में कोई व्यक्ति बिना इलाज के नहीं मरेगा। मुझे तसल्ली है कि मैंने अपना वादा पूरा कर दिया है।

इस जीवट महिला को हमारा सलाम!